नरेन्द्र चम्पकलाल त्रिवेदी

बनाम

गुजरात राज्य

(आपराधिक अपील सं. 97/2012)

मई 29, 2012

(डॉ. बी.एस. चौहान एण्ड दीपक मिश्रा जे.जे.)

भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम 1988 धारा -7 दोषसिद्धि अन्तर्गत भ्रष्ट धन की बरामदगी -अभिनिर्धारित केवल भ्रष्ट धन की बरामदगी ही दोषसिद्ध करने के लिए पर्याप्त नहीं है। जब तक वहां यह साक्ष्य हो कि रिश्वत मांगी गई थी या, धन स्वेच्छया से रिश्वत के रूप में दिया गया था। यद्यपि अधिनियम की धारा 20 में यह साविधिक उपधारणा है जिसके अनुसार अभियुक्त द्वारा या तो प्रत्यक्ष या परिस्थितिजन्य कुछ साक्ष्य को रिकार्ड पर लाया जाकर खण्डन किया जा सकता है कि धन को उद्देश्य या इनाम के अलावा धारा 7 में स्वीकार किया गया था। हस्तगत मामले में अभियुक्तगण/अपीलाथीर्गण की जेबों में से धन की बरामदगी की गई थी। इस अधिनियम की धारा 20 के तहत उपधारणा बाध्यकारी बन गई। वहां ऐसा कोई साक्ष्य नहीं था, जिसके आधार पर यह कहा जा सकता है कि उपधारणा का खण्डन हो गया था। वहां परछाई गवाह की उपस्थिति पर किसी प्रकार का संदेह नहीं था। सभी गवाहों ने अभियोजन मामले का

समर्थन किया था। इसलिए विचारण न्यायालय द्वारा सुनाये गये दोषसिद्ध के निर्णय को जिसे उच्च न्यायालय द्वारा पुष्ट किया था, में हस्तक्षेप करने का कोई आधार नहीं है।

भारत का संविधान 1950, अनुच्छेद 142- दण्डादेश में हस्तक्षेप का दायरा-

अभिनिर्धारित -संविधान के अनुच्छेद 142 के तहत प्रदान की गई शक्ति एक संवैधानिक शक्ति है और जिसे वैधानिक प्रावधान से नियंत्रित नहीं किया जा सकता है। इस शक्ति का उपयोग इस मामले में लागू कानून को बदलने में नहीं किया जा सकता है। इसका मतलब यह है कि अनुच्छेद 142 के तहत कार्य करते हुए उच्चतम न्यायालय ऐसा आदेश पारित नहीं कर सकता या राहत नहीं दे सकता, जो पूरी तरह से असंगत है या जो मामले से संबंधित मूल या वैधानिक प्रावधानों के खिलाफ है।

इसे देखते हुए कि जहां न्यूनतम सजा का प्रावधान है। किसी भी तरह से यह उचित नहीं लगता है कि भारत के संविधान के अनुच्छेद 142 के तहत क्षेत्राधिकार का प्रयोग करते हुए तथाकथित सजा कम करने वाले कारकों के आधार पर सजा में कमी कर दे। एेसे कारक वैधानिक अधिदेश को प्रतिस्थापित करने के समान होंगे। राशि छोटी हो सकती है, लेकिन इस प्रकार की प्रवृति को रोकने और दबाने के लिए विधायिका ने न्यूनतम सजा निर्धारित की है। भ्रष्टाचार किसी भी स्तर पर सहानुभूति या उदारता का

पात्र नहीं है। वास्तव में, सजा में कमी एक प्रीमियम जोड़ने के समान होगी, कानून का इससे कोई लेना देना नहीं है और यह सही भी है, क्योंकि भ्रष्टाचार किसी देश की रीढ़ को कमजोर कर देता है और अन्ततः अर्थव्यवस्था को बांझ बना देता है-सजा/सजा दी।

अपीलार्थी के विरूद्ध यह अाक्षेप था कि उन्होंने परिवादी से सर्वे रिपोर्ट की नकल देने के लिए रिश्वत की मांग की। विचारण न्यायालय और उच्च न्यायालय ने अपीलार्थीगण को भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा-7 के तहत अपराध कारित करने के लिए दोषसिद्ध ठहराया और प्रत्येक को 6 माह का कठोर कारावास और 5000/- रूपये जुर्माने की सजा सुनाई और जुर्माना अदा न करने पर प्रत्येक को एक माह का साधारण कारावास भुगतना होगा और अधिनियम की धारा 13(2) के तहत प्रत्येक एक वर्ष का कारावास और 5000/- और जुर्माना अदा न करने पर प्रत्येक को एक माह का साधारण कारावास भुगतना होगा। इस शर्त के साथ कि दोनो सजाएं समवर्ती चलेगी। इस अपीलों को दायर कर उच्च न्यायालय के आदेश को चुनौती दी गई।

न्यायालय द्वारा, अपीलों को खारिज किया गया।

अभिनिर्धारित 1.1 यह कानून का स्थापित सिद्धान्त है कि केवल भ्रष्ट धन की बरामदगी ही दोषसिद्धि दर्ज करने के लिए पर्याप्त नहीं है, जब तक इस बात का साक्ष्य न हो, रिश्वत की मांग की गई थी या रिश्वत के

रूप से स्वेच्छया से धन का भुगतान किया गया था। अवैध परितोषण के रूप में धन की मांग और स्वीकृति के किसी साक्ष्य की अनुपस्थिति के अभाव में, बरामदगी अकेले आरोपी को दोषी ठहराने का आधार नहीं होगी।

कानून में यह भी स्थापित है कि अधिनियम की धारा 20 के तहत एक वैधानिक उपधारणा है जिसे अभियुक्त द्वारा प्रत्यक्ष या परिस्थितिजन्य कुछ साक्ष्य को अभिलेख पर लाकर खारिज किया जा सकता है कि पैसा अधिनियम की धारा 7 के अन्तर्गत निर्धारित उद्देश्य इनाम के अलावा स्वीकार किया गया था। अधिनियम की धारा-20 के तहत अभियुक्त द्वारा दिये गये स्पष्टीकरण पर विचार करना न्यायालय के लिए बाध्यकारी है और संभावना की प्रबलता के आधार पर स्पष्टीकरण पर विचार करना चाहिए। इसे सभी संदेहों से परे साबित नहीं किया जाना चाहिए। यहां यह बताना आवश्यक है कि अभियोजन यह साबित करने के लिए बाध्य है कि वहां रिश्वत की अवैध प्रस्ताव और उसकी स्वीकृति थी, इसे तथ्यों पर आधारित करना होगा। (पैरा 12, 13) (175-जी-एच, 176-ए-डी)

टी. सुब्रमण्यम बनाम तमिलनाडु राज्य एआईऔर 2006 एससी 836: 2006 (1) एससीऔर 180, एम.नरसिंगा राव बनाम आंध्रप्रदेश राज्य (2001) 1 एससीसी 691: 2000(5) सप्ली. एससीऔर 584, मधुकर भास्कर राव जोशी बनाम महाराष्ट्र राज्य (2000) 8 एससीसी 571: 2000 (4) सप्ली. एससीऔर 475, राज राजेन्द्र सिंह सेठ बनाम झारखण्ड राज्य

व अन्य एआईऔर 2008 एससी 3217: 2008 (11) एससीऔर 66, महाराष्ट्र राज्य बनाम ध्यानेश्वर लक्ष्मण राव वानखेड़े (2009) 15 एससीसी 200: 2009 (11) एससीऔर 513, सी.एम. गिरीश बाबू बनाम सी.बी.आई. केरला उच्च न्यायालय कोचिन एआईऔर 2009 एससी 2022: 2009 (2) एससीऔर 1021- पर भरोसा किया।

1.2 हस्तगत मामले में आरोपी/ अपीलकर्ताओ की जेब से पैसा बरामद किया गया था। अधिनियम की धारा 20 के तहत एक उपधारणा बाध्यकारी हो जाती है। यह विधि की एक उपधारणा है और अधिनियम की धारा-7 के तहत लाये गये प्रत्येक मामले में इसे लागू करने का न्यायालय पर बाध्यता डालती है। यह उपधारणा एक खण्डनीय उपधारणा है। इस मामले में अभियुक्त-अपीलकर्ताओ द्वारा प्रस्तावित स्पष्टीकरण को स्वीकार नहीं किया गया, जो सही भी है। यहां ऐसा कोई साक्ष्य नहीं है, जिसके आधार पर यह कहा जा सकता है कि उपधारणा का खण्डन किया गया है। छाया गवाह की उपस्थिति के संबंध में वहां किसी प्रकार का संदेह नहीं है, उसने संकेत दिया था जिसके बाद छापामार दल घटनास्थल पर पहुंचा था और आवश्यक कार्यवाही की। अभियोजन मामले का सभी गवाहों ने समर्थन किया था। अपीलकर्ताओं के कब्जे से करेन्सी नोट बरामद किये गए थे। लम्बी प्रतिपरीक्षा से वास्तव में उनकी उपस्थिति और अभिसाक्ष्य की सत्यता पर संदेह करने के लिए कुछ भी निकला है। अपीलकर्ताओं ने दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के तहत अपने बयानों में अपना रूख स्पष्ट

करने का भरपूर प्रयास किया है, लेकिन वे उपधारणा का खण्डन करने में बुरी तरह असफल रहे हैं। पी.डब्लयू-2 ने स्पष्ट रूप से कहा है कि परिवादी ने अपनी जेब से 50 रूपये निकाले और निर्देशानुसार आरोपी अपीलकर्ताओं को दे दिये। इस प्रकार इसमें कोई संदेह नहीं है कि अपीलकर्ताओं ने सर्वेक्षण रिपोर्ट प्रदान करने के लिए रिश्वत की मांग की और उसे स्वीकार भी किया था, इसलिए विचारण न्यायालय द्वारा दर्ज की गई दोषसिद्धि जिसकी उच्च न्यायालय द्वारा पुष्टि की गई थी, में किसी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं रह जाती है। (पैरा - 17, 18)(178- सी-डीः 178- एफ-एचः 179-ए-सी)

2. भारत के संविधान के अनुच्छेद 142 के सम्मान में अवधारणा करते हुए "लक्ष्मीदास मोरारजी इसमें यह अभिनिर्धारित किया गया कि संविधान के अनुच्छेद 142 के तहत शक्ति एक संवैधानिक शक्ति है और इसलिए वैधानिक अधिनियमों द्वारा प्रतिबंधित नहीं है। यद्यपि उच्चतम न्यायालय संविधान के अनुच्छेद 142 के तहत कोई आदेश पारित नहीं करेगा जो लागू मूल कानून को प्रतिस्थापित करने या विषय से संबंध रखने वाले स्पष्ट वैधानिक प्रावधान की अनदेखी करता हो। साथ ही इन संवैधानिक शक्तियों को किसी भी तरह से किसी भी वैधानिक प्रावधानों से नियंत्रित नहीं किया जा सकता है। हालांकि यह भी स्पष्ट किया जाना चाहिए कि इस शक्ति का उपयोग मामले पर लागू कानून को बदलने के लिए भी नहीं किया जा सकता है। इसका आशय है कि अनुच्छेद 142 के

तहत कार्य करते हुए सर्वोच्च न्यायालय ऐसा आदेश पारित नहीं कर सकता या राहत नहीं दे सकता, जो पूरी तरह से असंगत है या मामले से संबंधित सारवान या वैधानिक अधिनियमों के खिलाफ है। इसके अनुसार जहां न्यूनतम सजा का प्रावधान है किसी भी तरह से यह उचित नहीं लगता है कि भारत के संविधान में अनुच्छेद 142 के तहत क्षेत्राधिकार का प्रयोग कर इसे लागू करते हुए तथाकथित सजा कम करने वाले कारको के आधार पर सजा में कमी कर दे। ऐसे कारक जो वैधानिक अधिदेश को प्रतिस्थापित करने के समान होंगे और इसके अलावा यह उस मूल वैधानिक प्रावधान की अनदेखी करने के समान होगा, जो रिश्वत की मांग और स्वीकृति से संबंधित आपराधिक कृत्य के लिए न्यूनतम सजा का प्रावधान करता है। राशि छोटी हो सकती है लेकिन इस प्रकार की प्रवृति को रोकने और दबाने के लिए विधायिका ने न्यूनतम सजा का प्रावधान किया है। यह सर्वोपरि मस्तिष्क में ध्यान में रखना चाहिए कि भ्रष्टाचार किसी भी स्तर पर सहानुभूति या उदारता का पात्र नहीं है।वास्तव में सजा में कमी एक प्रीमियम जोड़ने के समान होगी। कानून का इससे कोई लेना देना नहीं है और यह सही भी है क्योंकि भ्रष्टाचार किसी भी देश की रीढ़ को कमजोर कर देता है और अंततः देश की अर्थव्यवस्था को बांझ बना देता है। (पैरा - 22-23)(180- G: 181- A-G)

विश्वरैया आयरन एण्ड स्टील लि० बनाम अब्दुल गनी एण्ड अन्य एऔईऔर 1998 एससी 1895 केशाभाई मालाभाई वांकर बनाम गुजरात

राज्य 1995 सप्ली. (3) एससीसी 704; *लक्ष्मीदास मोरारजी (मृत) विधिक वारिसान बनाम बहरोज दराब मदान (2009) 10 एससीसी 425 : 2009(14) एससीऔर 777- पर भरोसा किया।

केस लॉ रेफ्रेरन्स:

2006(1) एससीऔर 180	भरोसा किया	पैरा 12
2000(5) सप्ली. एससीऔर 584	भरोसा किया	पैरा 13
2000(4) सप्ली. एससीऔर 475	भरोसा किया	पैरा 13
2008(11) एससीऔर 66	भरोसा किया	पैरा 14
2009(11) एससीऔर 513	भरोसा किया	पैरा 15
2009(2) एससीऔर 1021	भरोसा किया	पैरा 16
एआईऔर 1998 एससी 1895	भरोसा किया	पैरा 20
1995 सप्ली (3) एससीसी 704	भरोसा किया	पैरा 21
2009(14) एससीऔर 777	भरोसा किया	पैरा 22

दाण्डिक अपीलीय क्षेत्राधिकार: दांण्डिक अपील नं0 97/2012

गुजरात उच्च न्यायालय अहमदाबाद के आपराधिक अपील सं० 31/1999 निर्णय व आदेश दिनांक 14-10-2011

साथ ही आपराधिक अपील सं0 98/2002

के.एल. दवे, रश्मिकुमार मनीलाल विठलानी वास्ते अपीलार्थी

जैसल हेमंतिका वाही वास्ते प्रत्यर्थीगण

दीपक मिश्रा न्यायाधिपति द्वारा न्यायालय का निर्णय दिया गया-

1. वर्तमान अपीलें 1999 की आपराधिक अपील सं. 31 में गुजरात उच्च न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा पारित दोषसिद्ध के निर्णय और सजा के आदेश दिनांक 14-10-2021 के खिलाफ निर्देशित है, जिसके तहत अपीलीय न्यायालय के 1994 के विशेष मामले सं. 6 में विद्वान अतिरिक्त विशेष न्यायाधीश भावनगर द्वारा पारित 01 दिसम्बर 1998 के निर्णय एवं दोषसिद्धि और सजा के आदेश की पुष्टि की गई है,जिसमें विद्वान अतिरिक्त विशेष न्यायाधीश ने अपीलकर्ताओं को भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 7 के तहत दण्डनीय अपराध के लिए दोषी ठहराया और 5000/-रूपए जुर्माने के साथ 6 महीने के कठोर कारावास की सजा सुनाई। 5000/-जुर्माना न देने पर प्रत्येक को एक महीने की अवधि के लिए साधारण कारावास भुगतना होगा और उन्हें अधिनियम की धारा 13(2) के तहत दोषी ठहराया और उन्हें एक वर्ष की अवधि के लिए कठोर कारावास और 5000 रूपये जुर्माना की सजा सुनाई और प्रत्येक को जुर्माना देने में व्यतिक्रम करने पर एक महीने के लिए साधारण कारावास की सजा भुगतनी होगी, जो इस शर्त के साथ होगी कि दोनों सजाएं समवर्ती होगी।

2.अभियोजन मामले में व्याप्त आवश्यक तथ्य यह है कि परिवादी गजेन्द्र जगत सिंह जडेजा वीरभद्र नगर सोसायटी के प्लाॅट नं0 1 में रहते थे। जैसा कि शहर सर्वेक्षण कार्यालय के अभिलेख प्रश्नगत परिसर के संबंध में उसके दादा का नाम अभिलेख में दर्ज किया गया था। परिवादी शहर सर्वेक्षण कार्यालय भावनगर के कार्यालय में दिनांक 11 मार्च 1994 को संपत्ति कार्ड और उसका स्केच कार्ड प्राप्त करने के लिए गया। उक्त कार्यालय के लिपिक श्री जगानी द्वारा उपरोक्त उद्देश्य के लिए एक आवेदनपत्र प्रस्तुत करने और 15 मार्च 1994 को आने के लिए कहा गया था। परिवादी उक्त दिनांक को दोपहर लगभग 1.30 बजे शहर सर्वेक्षण कार्यालय गया और श्री जगानी को एक आवेदन दिया, जिसने उसे आवेदन श्री नरेन्द्र चम्पक लाल त्रिवेदी जो कि 2012 की आपराधिक अपील सं0 97 में अपीलकर्ता को सौंपने के लिए कहा जो सामने वाले कमरे में बैठा था जिसने बताया कि उसे उक्त प्रतियां तैयार करने में एक सप्ताह का समय लगेगा। परिवादी ने श्री जगानी से मामले का शीघ्रता से निपटाने के लिए अनुरोध किया। क्योंकि उसे प्रतियाेंं के साथ अपने पिता से मिलने जाना था और श्री जगानी ने उत्तर दिया कि तुरंत प्रतियां प्राप्त करने के लिए 50 रूपये लगेगे। क्योंकि उस समय परिवादी के पास पैसे नहीं थे, इसलिए जगानी ने उसे आपराधिक अपील सं0 98/2020 में अपीलकर्ता त्रिवेदी और हरजी भाई देवजी भाई चैहान से मिलने के लिए कहा, जिन्होंने उसे बताया कि भुगतान करने पर उसे प्रतियां दे दी जाएगी और 4.30 से 4.50 पीएम के

बीच प्रतियां प्राप्त करना बताया। चूंकि अपीलकर्ता का भुगतान करने का कोई इरादा नहीं था, उसने भ्रष्टाचार निरोधक ब्यूरो के कार्यालय जो उसके परिसर के भूतल पर स्थित था, से संपर्क किया और पुलिस निरीक्षक को परिवाद किया। संबंधित निरीक्षक ने दो पंच गवाहों की सहायता मांगी और उन्हें मामला समझाया। उसके बाद एन्थ्रेसीन पाउडर की मदद से यू.वी. लेप का प्रयोग किया गया। उसके बाद परिवादी ने करेंसी नोट पेश किये और परिवादी और साथ ही गवाहों को आवश्यक निर्देश दिये। पंचनामा का प्रारंभिक भाग तैयार किया और पंचों के हस्ताक्षर करवाये। उसके बाद परिवादी पंच और छापेमार दल के सदस्य शहर सर्वेक्षण कार्यालय के लिए रवाना हुए।

3-जैसा कि अभियोजन कहानी का वृतांत आगे बढ़ाया जावे जगानी ने परिवादी को उक्त चौहान से मिलने और धन के भुगतान करने के लिए कहा। निर्देश मिलने पर वे उक्त चौहान के कमरे में गये और उन्हें निर्देशित किया गया कि वे उक्त त्रिवेदी को फीस के रूप में 7.10 पैसे भुगतान करें और संपत्ति कार्ड और स्केच प्राप्त करें। इसके बाद कथित चौहान ने परिवादी से तय की गई राशि की मांग की और जब उससे पूछा गया कि राशि किसे सौंपनी है तो चौहान ने कहा कि त्रिवेदी को दे दो और त्रिवेदी को राशि स्वीकार करने के लिए कहा। इसके बाद परिवादी ने अपनी शर्ट की बायें जेब से पैसे निकाले और त्रिवेदी को सौंप दिये, जिसे त्रिवेदी ने अपने दायें हाथ में रख लिये। उसने अपने दोनों हाथों से रूपये गिने और अपनी बांयी

तरफ की जेब में रख लिए। जैसा कि पहले से तय था। छापेमारी दल को संकेत दिया गया और वह घटनास्थल पर पहुंचा। इसके बाद त्रिवेदी के दोनों हाथों की अंगुलियों, हथेलियों और जेब पर यू.बी. रसायन का प्रयोग किया गया तो हल्के नीचे रंग के फलोरोसैट निशान पाये गये। पंच गवाह सं. 1 ने त्रिवेदी से करेंसी नोट ले लिये, जिसमें दो दस रूपये के नोट और एक पांच रूपए का नोट था। करेंसी नोट के पंचनामे के पहले भाग पर अंकित अंकों के साथ हल्के नीले रंग के फलोरोंसेट निशान पाए गए। शेष रूपयों के बारे में पूछने पर त्रिवेदी ने कहा कि उसने ये रूपये चौहान को दे दिये है। त्रिवेदी और चौहान के हाथों और जेबों पर यूवी लेपो का प्रयोग किया गया और एंथ्रेसीन पाउडर के हल्के नीले फलोरोसेंट निशान पाए गए। पंचनामा के पहले भाग में अंकित अंकों से करेंसी नोटों का मिलान किया गया। दोनों अभियुक्तों अपीलकर्ताओं के पास से करेंसी नोट बरामद हुए। एन्थ्रेसीन पाउडर के निशान पाये गए और पंचनामा का दूसरा भाग तैयार किया गया। अनुसंधान अधिकारी ने आगे अग्रिम अनुसंधान किया, पंचनामा दर्ज किया और अपेक्षित स्वीकृति प्राप्त करने के बाद 25 अगस्त 1994 को सक्षम न्यायालय में आरोपपत्र पेश किया।

4-विद्वान विचारण न्यायाधीश ने उन अपराधों के संबंध में आरोप विरचित किये, जिनका पूर्व में उल्लेख किया गया है। अपीलकर्ताओं ने स्वयं को दोषी नहीं होना बताया और विचारण किये जाने की मांग की।

5- इसी क्रम में अपीलकर्ताओं के विरूद्ध लगाये गये आरोपों को सही साबित करने के लिए अभियोजन पक्ष ने कई गवाहों को परीक्षित करवाया और मामले में समर्थन में कई दस्तावेज साक्ष्य पेश किये।

6- अभियुक्त/अपीलकर्ताओं ने दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के तहत अपने बयानों में उन आरोपों का खण्डन किया कि उन्होंने किसी अवैध परितोषण की राशि की मांग की थी, लेकिन वे अपने बचाव में कोई साक्ष्य पेश नहीं करना चाहते है।

7- विद्वान विचारण न्यायाधीश ने मौखिक और साथ ही दस्तावेजी साक्ष्य का विश्लेषण किया और पक्षकारों द्वारा दी गई सुझावों पर विचार करने के बाद अपीलकर्ताओं को दोषी पाया और ऊपर बताये गये अनुसार दोषी ठहराया।

8- अपीलकर्ताओं ने उच्च न्यायालय के समक्ष एकल अपील को प्राथमिकता दी। उच्च न्यायालय के समक्ष यह तर्क दिया गया कि विद्वान विचारण न्यायाधीश ने बचाव पक्ष की दलील और अभिलेख पर लाई गई सामग्री की अपर्याप्तता पर विचार करने में असफल रहे जिससे यह स्पष्ट हो सके कि अभियोजन पक्ष अपने मामले में यह साबित करने में बुरी तरह विफल रहा है कि रिश्वत की मांग की गई और इसे स्वीकार किया गया था। इसलिए अधिनियम की धारा 7 और 13 के तत्वों को साबित नहीं किया । यह तर्क दिया गया कि न तो एफआईऔर और न ही परिवादी की

साक्ष्य से दूर दूर तक यह स्थापित होता है कि रिश्वत की मांग की गई और जब एक बार उक्त मुख्य तथ्य साबित नहीं हुआ तो उनके खिलाफ लगाये गये आरोप ताश के पत्तों की तरह ध्वस्त हो चुके थे। यह तर्क दिया गया कि भ्रष्टाचार निरोधक ब्यूरों का कार्यालय परिवादी द्वारा पट्टे पर दिया गया था, इसलिए वह आरोपी/अपीलकर्ताओं को फर्जी जाल में फंसाने और झूठा फंसाने में सक्षम था। आगे तर्क दिया गया कि परिवादी और पंच गवाह सं. 1 ने प्रतिपरीक्षा में कहा था कि त्रिवेदी ने परिवादी से 50 रूपयों की कोई मांग नहीं की और पकड़े गए रूपयों की वसूली भी साबित नहीं हुई। क्योंकि पंच स्वतंत्र गवाह नहीं है और उनकी साक्ष्य किसी भी स्वीकार्यता के लायक नहीं है। यह प्रस्तावित किया गया था कि विद्वान विचारण न्यायाधीश इस तथ्य पर विचार करने में विफल रहे कि जगनी जो मुख्य दोषी था उसके विरूद्ध कानून के तहत मामला दर्ज नहीं किया गया और इसलिए अभियोजन पक्ष ने जानबूझकर अपीलकर्ताओं को फंसाने के लिए कड़ी को तोड़ दिया था और इसलिए यह एक विद्वेषपूर्ण अभियोजन था। उन्होंने प्रस्तुत किया कि कमरे में अन्य गवाह भी थे, लेकिन अभियोजन ने केवल हितबद्ध गवाह को ही परीक्षित कराने के लिए चुना और संक्षेप में दोषसिद्ध का निर्णय दृष्टिकोण की विकृति से ग्रस्त था और निरस्त किए जाने योग्य था।

9- राज्य के विद्वान वकील ने उच्च न्यायालय के समक्ष तर्क दिया कि जगनी को आरोपी के रूप में पेश नहीं करने पर दिया गया जोर पूरी

तरह से अप्रासंगिक था। क्योंकि उसने परिवादी से कभी कोई मांग नहीं की। उन्होंने अभिलेख पर मौजूद विभिन्न दस्तावेजों और साक्षियों की साक्ष्य का हवाला देते हुए कहा कि आरोपी व्यक्तियों के खिलाफ लगाये गये आरोप पूरी तरह से साबित हो चुके है और अभिलेख पर ऐसा कुछ भी नहीं है जिससे दूर दूर तक यह पता चले कि उन्हें झूंठा फंसाया गया है। इस निष्कर्ष तक पहुंचने के लिए परिवादी और ए.सी.बी. अधिकारी के बीच संबंधों पर विचार नहीं किया जा सकता कि शिकायत झूठी दुर्भावनापूर्वक थी और अभियुक्त व्यक्तियों को इसमें जानबूझकर शामिल किया गया था। उनके द्वारा प्रचारित किया गया था कि राशि की बरामदगी त्रिवेदी की जेब से की गई थी और अवैध परितोषण त्रिवेदी को सौपने की मांग अभियुक्त चौहान द्वारा की गई थी। दोनो की सहमति से अपराध किया गया था। यह बात मौखिक और दस्तावेजी साक्ष्य से स्थापित हो चुकी थी। राज्य के विद्वान वकील ने पंच गवाहों के संस्करण, वैज्ञानिक प्रमाण और फंसाने वाले अधिकारी की साक्ष्य पर अत्यधिक बल दिया। अनुमान के सिद्धान्त को सेवा में लागू किया गया और उक्त विवाद को यह रूख सामने रखते हुए सम्पादित किया गया कि साक्ष्य का संचयी प्रभाव अभिलेख में आरोपी व्यक्तियों के खिलाफ लगाये गये आरोपों को सही करने के लिए अधिनियम की धारा-13(1)(डी)के साथ पढ़ी गई धारा 7 और धारा 13(2) की सामग्री को स्पष्ट रूप से संतुष्ट किया है।

10. विद्वान एकल न्यायाधीश ने कमरे में आरोपी अपीलकर्ताओं की उपस्थिति के संबंध में तथ्यों पर ध्यान दिया कि अपीलकर्ता सं. 2 चौहान ने पंच गवाह संख्या-1 की उपस्थिति में मांग की। चौहान द्वारा इसे त्रिवेदी को सौपने का निर्देश जिसके द्वारा सहमति साबित होती है। अपराध में अपीलकर्ताओं की भागीदारी और जटिलता के बारे में पी.डब्लयू-2 की साक्ष्य, परिवादी और अभियुक्त व्यक्तियों के बीच दुश्मनी की अनुपस्थिति, गवाहों के अप्राप्य पहलू जो अपने दृष्टिकोण में अन्तर्निहित थे। स्वीकृति और बरामदगी जिसने मांग और स्वीकृति के बारे में कुल विश्वसनीयता को प्रेरित किया और उपधारणा के सिद्धान्त को आकर्षित किया। ये सभी यह दिखाने के लिए एक लम्बा रास्ता तय करेंगे कि अभियोजन ने मामले को उचित संदेह से परे साबित कर दिया है और अधिनियम की धारा-20 के तहत उपधारणा का खण्डन करने के लिए अभियुक्त अपीलकर्ताओं की असमर्थता, अपराध में अभियुक्त अपीलकर्ताओं को फंसाने के लिए मुखबिर और अनुसंधान अधिकारी के बीच दायित्व के अस्तित्व के सिद्धान्त की अस्वीकार्यता और दूरदर्शिता पर विचार किया गया। अपीलकर्ताओं की यह समझाने में विफलता कि उनके कब्जे से विवादास्पद राशि कैसे पाई गई और उनके हाथों पर एन्थ्रेसीन पाउडर कैसे पाया गया और अन्ततः यह राय दी गई कि सभी तथ्यों और परिस्थितियों का संचयी पहलू स्पष्ट रूप से अपीलकर्ताओं के खिलाफ विरचित किये गये आरोपों को स्थापित करता है। इस दृष्टिकोण से उच्च न्यायालय ने दोषसिद्धि के फैसले की पुष्टि की।

11. हमने दोनो पक्षों के विद्वान वकीलों को विस्तार से सुना है और अभिलेख का ध्यानपूर्वक अध्ययन किया है।

12. शुरूआत में हम कह सकते है कि बरामदगी भाग पूरी तरह से चुनौती रहित हो गया है, हालांकि हमारे समक्ष और उच्च न्यायालय के समक्ष भी एक कमजोर प्रयास किया गया था फिर भी साक्ष्य के अवलोकन और किये गये परीक्षण से यह पता चलता है कि अभियुक्त अपीलकर्ताओं के कब्जे से राशि की बरामदगी की गई थी। यह कानून का स्थापित सिद्धान्त है कि केवल भ्रष्ट धन की बरामदगी ही दोषसिद्ध किये जाने के लिए पर्याप्त नहीं है जब तक कि इस बात की साक्ष्य न हो कि रिश्वत की मांग की थी या रिश्वत के रूप में स्वेच्छया से धन का भुगतान किया गया था। इस प्रकार एकमात्र मुद्दा जिसे संबोधित किया जाना शेष है, वह यह है कि क्या रिश्वत की मांग की गई थी और उसे स्वीकार किया गया था। यह ज्ञात हो कि अवैध परितोषण के रूप में राशि की मांग और स्वीकृति के किसी साक्ष्य के अभाव में, बरामदगी अकेला किसी अभियुक्त को दोषी ठहराने के लिए एकमात्र आधार नहीं होगी। टी. सुब्रमण्यम बनाम तमिलनाडू राज्य में ऐसा ही कहा गया है। [1]

13. अवैध परितोषण के रूप में राशि की मांग और स्वीकृति अधिनियम के तहत अपराध का गठन करने के लिए अनिवार्य शर्त है। कानून में यह भी स्थापित है कि अधिनियम की धारा 20 के तहत एक

वैधानिक उपधारणा है जिसे अभियुक्त द्वारा प्रत्यक्ष या परिस्थितिजन्य कुछ साक्ष्य को अभिलेख पर लाकर अधिनियम की धारा 7 के तहत खण्डन किया जा सकता है कि धन निर्धारित उद्देश्य या इनाम के अलावा अन्यथा स्वीकार किया गया था। अधिनियम की धारा 20 के तहत न्यायालय पर यह बाध्यता है कि वह अभियुक्त द्वारा दिये गये स्पष्टीकरण पर विचार करें और स्पष्टीकरण पर विचार संभाव्यता की बहुलता के आधार पर होना चाहिए। इसे सभी उचित संदेहों से परे साबित नहीं किया जाना चाहिए, यहां यह बताना आवश्यक है कि अभियोजन यह स्थापित करने के लिए बाध्य है कि रिश्वत का अवैध प्रस्ताव और उसकी स्वीकृति थी, इसे तथ्यों पर आधारित करना होगा। हम इस लाभ के संदर्भ में निर्णय का उल्लेख कर सकते है। एम. नरसिंगा राव बनाम आंध्रप्रदेश राज्य[2] जिसमें तीन न्यायाधीशों की बैंच ने अधिनियम की धारा 20 का हवाला दिया और कहा कि धारा 20 के तहत कानूनी उपधारणा की एकमात्र शर्त यह है कि अन्वीक्षा के दौरान यह साबित किया जाना चाहिए कि अभियुक्त ने किसी भी परितोषण को स्वीकार कर लिया है या स्वीकार करने के लिए सहमत हो गया है। यह धारा यह नहीं कहती है कि इस शर्त को किसी प्रत्यक्ष साक्ष्य के द्वारा साबित किया जाना चाहिए, इसलिए एकमात्र आवश्यकता यह है कि यह साबित किया जाना चाहिए कि अभियुक्त ने परितोषण को स्वीकार कर लिया है या स्वीकार करने के लिए सहमत हो गया है। इसके बाद बैंच ने एक गद्यांश मधुकर भास्कर राव जोशी बनाम महाराष्ट्र राज्य [3]

प्रस्तुत किया, जिसमें अनुमोदन के साथ इस प्रकार पढ़ा जा रहा है कि 'उपधारणा करने के लिए तथ्यों पर आधारित आधार यह है कि परितोषण का भुगतान या स्वीकृति हुई थी।

1. एआईऔर 2006 एससी 836

2. (2001) 1 एससीसी 691

3. (2000) 8 एससीसी 571

एक बार जब उक्त आधार स्थापित हो जाता है कि तो यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि उक्त परितोषण को किसी भी अधिकारिक कार्य को करने या न करने के लिए उद्देश्य या इनाम के रूप में स्वीकार किया था। इसलिए परितोषण शब्द को इनाम के अर्थ में विस्तारित करने की आवश्यकता नहीं है। क्योंकि इनाम उस उपधारणा का परिणाम है जिसे न्यायालय को इस तथ्यात्मक आधार पर निकालना होगा कि परितोषण का भुगतान किया गया था। परितोषण या मूल्यवान वस्तु जैसे एक दूसरे से सटे दो भावों के मेल को देखकर यह बात फिर से पुष्ट हो जाएगी। यदि किसी मूल्यवान वस्तु की स्वीकृति से यह उपधारणा बनाने में सहायता मिल सकती है कि इसे किसी अधिकारिक कार्य को करने या न करने के उद्देश्य या पुरस्कार के रूप में स्वीकार किया गया था परितोषण शब्द को इस संदर्भ में संतुष्टि देने के लिए किसी भी भुगतान के अर्थ मे माना जाना चाहिए, लोकसेवक ने इसे प्राप्त किया।

14. 'राज राजेन्द्र सिंह सेठ बनाम झारखण्ड राज्य व अन्य' [4] में मधुकर भास्कर राव जोशी में दिये गये सिद्धान्त को दोहराया गया।

15. महाराष्ट्र राज्य बनाम ध्यानेश्वर लक्ष्मण राव वानखेड़े [5] में यह अभिनिर्धारित किया गया है कि इस निष्कर्ष पर पहुचंने के लिए अवैध पारितोषण की मांग की गई, न्यायालय का यह कर्तव्य है कि वह अभिलेख पर पाये गए गलत तथ्यों और परिस्थितियों को पूरी तरह से ध्यान में रखे और उक्त उद्देश्य के लिए निर्विवादित रूप से अधिनियम की धारा 20 में उपधारित साक्ष्य को भी ध्यान में रखा जाना चाहिए।

16. सीएम गिरीश बाबू बनाम सीबीआई कोचीन केरल उच्च न्यायालय [6]में एम.नरसिंगा (सुप्रा) एवं मधुरकर भास्कर राव जोशी (सुप्रा) के निर्णय का उल्लेख करने के बाद इस न्यायालय ने इस प्रकार से अभिनिर्धारित किया है कि -

4. एआईऔर 2008 एससी 3217

5. (2009) 15 एससीसी 200

6. एआईऔर 2009 एससी 2022

"19 यह अच्छी तरह से स्थापित है कि धारा-20 के अधीन की जाने वाली उपधारणा अनुल्लंघनीय नहीं है। अभियुक्त जिस पर आरोप विरचित किया गया है या तो उसके विरूद्ध प्रस्तुत गवाहों की प्रतिपरीक्षण से या विश्वसनीय साक्ष्य जोड़कर इसका खण्डन कर सकता है। यदि अभियुक्त

उपधारणा का खण्डन करने में विफल रहता है तो यह स्थापित रहेगा और न्यायालय द्वारा यह माना जा सकता है कि अभियोजन पक्ष ने यह साबित कर दिया है कि अभियुक्त ने परितोषण के लिए राशि प्राप्त की थी।"

17. इस हस्तगत मामले में अभियुक्त अपीलकर्ताओं की जेबों से धन बरामद किया गया था। अधिनियम की धारा 20 के तहत एक उपधारणा अनिवार्य बन जाती है कि यह विधि की एक उपधारणा है और अधिनियम की धारा 7 के तहत लाये गये प्रत्येक मामले में इसे लागू करने का न्यायालय का कर्तव्य है, यह उपधारणा खण्डन योग्य है, वर्तमान मामले में अभियुक्त अपीलकर्ताओं द्वारा दिये गये स्पष्टीकरण को स्वीकार नहीं किया गया है और यह स्पष्ट भी है। यहां ऐसा कोई साक्ष्य नहीं है जिसके आधार पर यह कहा जा सके कि उपधारणा का खण्डन किया गया है।

18. अपीलकर्ताओं के विद्वान वकील ने अत्यधिक बल के साथ प्रस्तुत किया कि स्वीकृत रूप से कोई मांग या स्वीकृति नहीं है। इस पहलू को मजबूत करने के लिए उन्हें मुख्य परीक्षण में शिकायतकर्ता के बयान से प्रेरणा ली है। हमारी सुविचारित राय में उक्त बयान को संदर्भ से बाहर नहीं पढ़ा जाना चाहिए। उसने अपने परीक्षण और प्रतिपरीक्षण में विभिन्न स्थानों पर मांग और स्वीकृति के संबंध में स्पष्ट किया है। छाया गवाह ने स्पष्ट रूप से कहा है कि रिश्वत की मांग की गई थी और रिश्वत दी गई थी। छाया गवाह की उपस्थिति पर संदेह करने के लिए कुछ भी अभिलेख

पर नहीं लाया गया। उसने संकेत दिया था जिसके बाद छापेमार दल घटनास्थल पर पहुंचा और आवश्यक कार्यवाही की। सभी गवाहों ने अभियोजन मामले का समर्थन किया। अपीलकर्ताओं के कब्जे से करेंसी नोट बरामद किये गये। लम्बी प्रतिपरीक्षा से वास्तव में उनकी उपस्थिति और साक्षियों की सत्यता पर संदेह करने के लिये कुछ भी नहीं निकला है, अपीलकर्ताओं ने दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के तहत अपने बयान में अपना पक्ष स्पष्ट करने का भरपूर प्रयास किया है, लेकिन हमें यह कहने में कोई हिचकिचाहट नहीं है कि वे उपधारणा को खारिज करने में पूरी तरह से विफल रहे है। पी.डब्लयू-2 ने स्पष्ट रूप से कहा है कि परिवादी ने अपनी जेब से 50 रूपये निकाले और निर्देशानुसार अभियुक्त अपीलकर्ता को दिये। इस प्रकार विश्लेषण करने और समझने पर, इसमें कोई संदेह नहीं रह जाता है कि अभियुक्त अपीलकर्ताओं ने सर्वेक्षण रिपोर्ट प्रदान करने के लिए रिश्वत की मांग की और इसे स्वीकार भी किया था, इसलिए विद्वान विचारण न्यायाधीश द्वारा दर्ज की गई सजा जिसे उच्च न्यायालय ने विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा पुष्टि की है, में किसी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है।

19. अपीलकर्ताओं के विद्वान वकील ने अपील पर बहस के दौरान प्रस्तुत किया था कि अपीलकर्ताओं को काफी नुकसान हुआ है क्योंकि उन्होंने अपनी नौकरियां खो दी है और राशि बहुत तुच्छ है। उक्त पहलुओं की सजा में कमी के लिए सजा कम करने वाले कारको के रूप में माना जा

सकता है। सहानुभूति इस आधार पर मांगी गई है कि घटना लगभग 18 साल पहले हुई थी और रकम मामूली है। अधिनियम की धारा 7(1) के अवलोकन से स्पष्ट है कि जब उक्त धारा के तहत अपराध साबित हो जाता है तो लोक सेवक को कारावास से दंडित किया जायेगा, जो छः माह से कम नहीं होगा। जिसे 5 साल तक बढ़ाया जा सकता है और जुर्माना से भी दायी होगा। अधिनियम की धारा 13(2) में कहा गया है कि कोई भी लोक सेवक जो आपराधिक कदाचार करता है उसे कारावास से दंडित किया जायेगा जो एक वर्ष से कम नहीं होगा, जिसे सात वर्ष तक बढ़ाया जा सकता है और जुर्माना से भी दायी होगा। जैसा कि आक्षेपित निर्णय से पता चलता है कि विद्वान विचारण न्यायालय ने न्यूनतम सजा दी है और जिसे उच्च न्यायालय ने पुष्ट किया है।

20. अपीलकर्ताओं के लिए विद्वान वकील के सुझाव को हम सहीं ढंग से समझे तो संक्षेप में यह है कि संविधान के अनुच्छेद 142 के तहत शक्ति को लागू किया जाना चाहिए। इस संदर्भ में हम लाभ के साथ इस न्यायालय के निर्णय विश्वैश्वर आयरन और स्टील लि0 बनाम अब्दुल गनी व अन्य [7] का उल्लेख कर सकते है।

7. एआईऔर 1998 एससी 1895

जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया है कि संविधान के अनुच्छेद 142 के तहत संवैधानिक शक्तियों को किसी भी तरह से वैधानिक प्रावधान

द्वारा नियंत्रित नहीं किया जा सकता है, लेकिन साथ ही इन शक्तियों का प्रयोग तब तक नही किया जाना चाहिए जब उनको प्रयोग सीधे तौर पर विषय से स्पष्ट रूप से संबंधित कानून से विवाद में आ सकता है। इस निर्णय में यह भी स्पष्ट कर दिया गया कि यह न्यायालय किसी भी कानून के मूल प्रावधान की अनदेखी नहीं कर सकता है।

21. केशाभाई मालाभाई वानकर बनाम गुजरात राज्य [8] में इस प्रकार अभिनिर्धारित किया गया कि:-

> ''6. अगला तर्क यह है कि संविधान के अनुच्छेद 142 के तहत शक्ति का प्रयोग करते हुए इस न्यायालय के पास सजा को कम करने की पूर्ण शक्ति है। हमें डर है कि हम वैधानिक उद्देश्य की अनदेखी नहीं कर सकते है और अधिनियम के तहत विहित न्यूनतम सजा को कम नहीं कर सकते है। निसंदेह अनुच्छेद 142 के तहत सर्वोच्च न्यायालय के पास किसी भी वैधानिक सीमा से मुक्त शक्ति है, लेकिन जब आवश्यक वस्तुओं के उत्पादन, समान आपूर्ति और उचित मूल्य पर वितरण के लिए वैधानिक नियमों में उल्लंघन के लिए दण्डात्मक अपराध विहित किये गये है तो यह सामाजिक हित में किया गया है, जिन्हें न्यायालय अनुच्छेद 142 के तहत शक्ति का प्रयोग करते समय ध्यान

में रखेगा और न्यूनतम सजा देने के विधायी नीति का सम्मान करेगा। संवैधानिक उल्लंघनों को दण्ड मुक्ति से समाप्त करने के लिए अधिनियम में संशोधन किया गया था। इस प्रकार हम पाते है कि यह हस्तक्षेप की आवश्यकता वाला उचित मामला नहीं है और तदनुसार अपील खारिज की जाती है।

22. लक्ष्मीदास मोरारजी (मृत) विधिक वारिसान द्वारा बनाम बेहरोज दराब मदान [9] में इस प्रकार निर्णय दिया गया है कि -

"अनुच्छेद 142 साम्यता के सिद्धान्तों पर आधारित एक विशिष्ट शक्ति की प्रकृति में है। न्यायालयों ने अनुच्छेद के तहत शक्तियों को अपरिभाषित छोड़ना उचित समझा है।

8. 1995 सप्ली. (3) एससीसी 704

9. (2009) 10 एससीसी 425

संविधान के अनुच्छेद 142 के तहत शक्ति एक संवैधानिक शक्ति है और इसलिए वैधानिक अधिनियमों द्वारा प्रतिबंधित नहीं है। यद्यपि सर्वोच्च न्यायालय संविधान के अनुच्छेद 142 के तहत कोई आदेश पारित नहीं करेगा जो लागू मूल कानून को प्रतिस्थापित करने या विषय से निपटने वाले अभिव्यक्त वैधानिक प्रावधानों की अनदेखी करने के बराबर होगा। साथ ही इन संवैधानिक शक्तियों को किसी भी वैधानिक प्रावधान से नियंत्रित

नहीं किया जा सकता है। यह भी स्पष्ट किया जाता है कि इस मामले में लागू किसी कानून को बदलने के लिए इस शक्ति का प्रयोग नहीं किया जा सकता है। इसका आशय यह है कि अनुच्छेद 142 के तहत कार्य करते हुए उच्चतम न्यायालय ऐसा आदेश पारित नहीं कर सकता था, राहत नहीं दे सकता- जो इस मामले से संबंधित मूल या वैधानिक अधिनियमों से पूरी तरह से असंगत या खिलाफ हो।

23. विधि की उपरोक्त घोषणा के मद्देनजर, जहां न्यूनतम सजा का प्रावधान हो, हमें लगता है कि तथाकथित कम करने वाले कारको पर सजा को कम करने के लिए भारत के संविधान के अनुच्छेद 142 के तहत क्षेत्राधिकार का प्रयोग करना बिल्कुल भी उचित नहीं होगा, जो वैधानिक अधिदेश को प्रतिस्थापित करने के समान होगा। इसके अलावा यह मूल वैधानिक प्रावधान की अनदेखी करने के समान जो रिश्वत की मांग और स्वीकृति से संबंधित आपराधिक कृत्य के लिए न्यूनतम सजा का प्रावधान विहित करता है। राशि छोटी हो सकती है, लेकिन इस प्रकार की प्रवृति को रोकने और दबाने के लिए विधायिका ने न्यूनतम सजा निर्धारित की है। यह सर्वोपरि ध्यान रखा जाना चाहिए कि किसी भी स्तर पर भ्रष्टाचार सहानुभूति या उदारता का पात्र नहीं है। वास्तव में सजा में कमी एक प्रीमियम जोड़ने के बराबर होगी। कानून का इससे कोई लेना देना नही है और यह सही भी है, क्योंकि भ्रष्टाचार किसी भी देश की रीढ़ को कमजोर करता है और अन्ततः देश की अर्थव्यवस्था को बांझ कर देता है।

24. अपीले बिना किसी आधार के खारिज की जाती है।-

अपील खारिज ।

यह अनुवाद और्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल 'सुवास' की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी विजेन्द्र कुमार और.जे.एस. द्वारा किया गया है।

अस्वीकरणः यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नही किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और अधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।